ISSN 2249-894X Impact Factor : 3.1402 (UIF) Volume - 5 | Issue - 9 | June - 2016
Review Of Research

यौन हिंसा और राज्यव्यवस्था: एक विश्लेषण

डॉ. सुभी धुसिया
एशोसिएट प्रोफेसर , समाजशास्त्र , दी.द.उ.गो.वि.वि.

प्रस्तावना :–

पितृसत्तात्मक समाज में महिला का शरीर उसकी प्रजनन क्षमता, यौनिकता सभी कुछ पुरुषों के नियन्त्रण में है। निजी सम्पत्ति की धारणा के अभ्युदय के साथ ही महिला को पुरुष-नियन्त्रण में रखने की प्रवृत्ति चल पड़ी। बढ़ते कालक्रम में इसने विकराल रूप धारण कर लिया, जिसकी परिणति महिला सम्बद्ध रूढ़ियों एवं अन्धविश्वासों में हुई। परिवार में ज्यादा स्त्रियाँ रखना (पुरुष की यौन इच्छा पूर्ति हेतु) पौरुष का प्रतीक माना जाने लगा। संक्षेप में कहने का तात्पर्य है कि समय के साथ महिला का शरीर व्यक्तिगत की परिधि से निकलकर सामाजिक परिधि में शामिल हो गया। इस प्रवृत्ति ने समाज और महिला समाज के समक्ष अनेक समस्याओं को जन्म दिया। महिलाओं के विरुद्ध बढ़ते यौन-अपराधों में इस प्रवृत्ति की भूमिका से इंकार नहीं कर सकते। यूँ तो यौन अपराधों में घरेलू हिंसा, बलात्कार, कार्यालय एवं सार्वजनिक स्थल पर यौन उत्पीड़न, दहेज हत्या, मीडिया में महिला का निम्न कोटि का चित्रण आदि को शामिल किया जाता है परन्तु प्रस्तुत लेख को सिर्फ बलात्कार की घटना के सन्दर्भ में सीमित किया गया है; साथ ही किस तरह राज्य/राजनेताओं की हस्तक्षेप नीति/निरपेक्ष नीति, बलात्कार की घटना को दबाने या कराने पर जोर देती है, इस लेख में कुछ महत्वपूर्ण घटनाओं के माध्यम से इस पर भी प्रकाश डाला जाएगा।

सर्वप्रथम मैं कुछेक उन रिपोर्टों का भी जिक्र करूँगी जिन्होंने इस सन्दर्भ में अकादमिक जगत को सचेत किया। सिटिजन इनिशिएटिव अहमदाबाद के तत्वाधान में स्त्रियों के एक खोजी दल ने "How has the Gujrat massacre effected minorities women?" नाम से अपनी रिपोर्ट दी। यह रिपोर्ट गोधरा काण्ड में हुई घटनाओं पर आधारित है।1 कमल मित्रा चिनोय की रिपोर्ट 'कारनेज' में भी सम्प्रदायिक ताकतों द्वारा हिंसा फैलाने की बात स्वीकारी गई है।

यहाँ हम बात उस देश की बात कर रहे हैं, जहाँ महिलायें वैधानिक तौर पर सर्वाधिक सुरक्षित देशों की श्रेणी में शामिल हैं, बावजूद इसके प्रति घण्टा 26 अपराध महिलाओं के विरुद्ध दर्ज होते हैं। बीते 10 वर्षों में अभी तक महिलाओं के 90,9713 केस दर्ज हुए हैं। प्रारम्भ में ही स्पष्ट कर दूँ कि यद्यपि आँकड़ों में दर्ज घटनायें वैयक्तिक सामाजिक कारकों की वजह से भी होती हैं, परन्तु राज्य की भूमिका पर प्रश्न उठाने का बड़ा कारण 19वीं सदी के तमाम समाज सुधार आन्दोलन (सती प्रथा, बाल विवाह, वक्षस्थल ढकने से सम्बन्धित कानून) हैं, जो कि तत्कालीन राज्य सरकार के हस्तक्षेप के बिना सफल नहीं हो सकते थे। यद्यपि यह विवाद का विषय है कि क्या कानून बनाने मात्र से अपराध रूक जायेंगे? परन्तु इस तथ्य को भी नहीं नकार सकते कि कानून/राज्य ही पीड़ित का सम्बल होता है। सामाजिक समझौते का हाब्स

का सिद्धान्त जितना वास्तविक प्रतीत होता है, लाक का हास्यास्पद। राज्य की स्थापना या निरन्तरता में पुरस्कार/दण्ड की महत्वपूर्ण भूमिका को नकारा नहीं जा सकता, इसलिए यौन अपराधों में राज्य की भूमिका पर भी सवाल खड़ा होता है, क्योंकि ये सभी राज्य के अंग हैं।

महिला एक्टिविस्टों के अनुसार परिवार, राज्य और सभी संस्थाओं में पितृसत्ता काफी जटिल और परस्पर विरोधी तरीके से काम करती है। यौन पवित्रता जैसे परम्परागत मूल्यों पर आवश्यकता से अधिक जोर देने के कारण ही बलात्कार हमेशा 'व्यक्तिगत सुख' के लिए नहीं वरन् 'प्रतिरोध' के तौर पर भी प्रयुक्त होता है। 1990 के दशक के शुरू में साम्प्रदायिक दंगों एवं हिंसा ने भारतीय राजव्यवस्था के भीतर के स्त्री उत्पीड़न को स्पष्ट रूप से रेखांकित किया है। 1990 के दशक के शुरुआत में शिवसेना की महिला कार्यकत्रियों ने अपने पुरुष साथियों को महिलाओं के विरुद्ध तमाम हिंसक कार्यों के लिए प्रेरित किया। विश्व हिन्दू परिषद की महिला शाखा की कृष्णा शर्मा का यह बयान कि 'अगर कोई लड़की बलात्कार होने के कारण आत्महत्या कर लेती है तो क्या उसका भाई बदला नहीं लेगा। हिन्दुओं को कुछ ऐसा उदाहरण देना होगा, जिससे दूसरे उनसे डरें। हमें अपनी दिलेरी का सबूत देना है। अगर वह हमारी 10-15 महिलाओं का बलात्कार करते हैं तो हमें यह सिद्ध करने के लिए कि हम किसी से कम नहीं, कुछ तो बलात्कार करने होंगे।''2 1992 में बाबरी मस्जिद विध्वंस के बाद फैले दंगें की आग में घी डालने का काम भाजपा सदस्या साध्वी ऋतम्भरा ने किया। साध्वी ने हिन्दुओं के लिए एक कैसेट जारी किया। इस कैसेट में सदस्यों को 'आक्रामक सम्भोग' के लिए उकसाया गया। साध्वी को दोषी पाया गया।

2002 को गोधरा की दुर्भाग्यपूर्ण घटना मंे सत्तारूढ़ राजनीतिक दल की सक्रिय भूमिका से सभी वाकिफ हैं। पूर्व में वर्णित रिपोर्ट के अनुसार भाजपा की महिला विधायक, महिला सरपंच और उनके परिजनों ने अपने-अपने क्षेत्रों में मुसलमानों के विरुद्ध हिंसा (बलात्कार, लूटमार, आगजनी, हत्या) कर रही भीड़ का नेतृत्व किया। इसी राजनीतिक दल के म्युनिसपिल काॅरपोरेशन के सदस्यों ने सोला सिविल अस्पताल में डाॅक्टरों को घायलों का अपने विवेक से इलाज भी नहीं करने दिया। गोधरा काण्ड के दौरान बिलकिस बानो का केस भी काफी चर्चित रहा। बिलकिस बानो वह गर्भवती महिला थी, जिसके साथ न सिर्फ गैंगरेप हुआ बल्कि उसी के सामने उसकी मासूम बच्ची का कत्ल भी कर दिया गया। प्रारम्भ में स्थानीय पुलिस ने केस को दबाने हेतु इस मसले से जुड़े सबूतों को नष्ट कर दिया था।

घटनाओं की इस कड़ी में निर्भया काण्ड का भी जिक्र करना चाहूँगी। इस वीभत्स काण्ड ने न सिर्फ पूरी दुनिया के सामने भारत को शर्मशार किया वरन् इस बहस को भी शुरू किया कि जघन्य अपराधों में शामिल किसी किशोर की सजा क्या तय की जाए? इस काण्ड का पाँचवा एवं मुख्य आरोपी नाबालिग था, इसलिए जहाँ बाकी अपराधियों को सजा सुनाई गई, इस किशोर को सिर्फ 3 साल कैद की सजा हुई। अब नए 'किशोर न्याय अधिनियम' के अनुसार जघन्य अपराधों के मामले में 16 साल के किशोरों पर भी वयस्कों की तरह मुकदमें चलेंगे। नियमतः कानून को पीछे की तिथि से लागू नहीं किया जा सकता, इसलिए वह किशोर 'समुचित सजा' से बच गया, हालाँकि जनसामान्य में इस बात को लेकर आक्रोश था। निःसन्देह सरकार नियमानुसार कार्य कर रही थी, परन्तु यह पूरा सच नहीं है क्योंकि 'यही नियम' समय, परिस्थिति के अनुसार बदल गया। कुछ ही समय बाद जनसंख्या के आधार पर भारत के सबसे बड़े राज्य उ0प्र0 में तत्कालीन सरकार ने नए आदेश के तहत ना सिर्फ पदोन्नति में आरक्षण को खत्म किया वरन् तत्कालीन नियमानुसार पदोन्नत हुए अनुसूचित जाति के हजारों व्यक्तियों को पदोन्नत कर दिया गया, यानी वहाँ नए आदेश से पीछे की तिथि से कानून लागू किया गया। कुछ समयान्तराल पर घटित हुए ये दोनों मामले मुद्दों पर सरकार की गम्भीरता पर सवाल खड़ा करती है। एक तरफ पीछे की तिथि से कानून को लागू न करने के वजह से जघन्य अपराधी छूट गया, जबकि दूसरी तरफ नियमानुसार पदोन्नत हुए व्यक्तियों से आपने उनकी सामाजिक, आर्थिक प्रतिष्ठा छीन ली। इसका क्या अर्थ निकाला जाए? यानी कानून से बड़ा व्यक्तिगत लाभ है।

29 सितम्बर 2006 के खैरलांजी प्रकरण का जिक्र बहुत अवश्यम्भावी है, जिसमें एक दलित परिवार के चार सदस्यों (माँ-बेटी, उसके दो युवा लड़के) की हत्या कर दी गई। हत्या से पूर्व उनको निर्वस्त्र कर सार्वजनिक रूप से प्रताड़ित किया गया और माँ-बेटी के साथ उनके मरने से पहले और बाद में सामूहिक रूप से बलात्कार किया गया। इस घटनाक्रम के पीछे जातीय भेद, जमीनी विवाद दोनों निहित था, परन्तु नृशंस घटना के बाद खबर को दबाने हेतु जिस तरह से राजनीतिक दाँव-पेंच खेले गये वह राजव्यवस्था पर प्रश्नचिन्ह थी। इस घटना के दो महत्वपूर्ण पहलू हैं-

1. आपसी रंजिश में दोनों महिलाओं के साथ नृशंस बलात्कार और उनकी हत्या।

2. घटना को दबाने हेतु सत्ताधीशों के दाँव-पेंच।

राजनीतिक हस्तक्षेप की वजह से पुलिस एवं प्रशासकीय निष्क्रियता ने घटना को दबाया और आरोपित पर कोई कार्रवाई भी नहीं की जिसके विरोध में सड़क तक जन-उभार फैल गया। जनसैलाब को दबाने के लिए पुलिस ने निशस्त्र भीड़ पर लाठी चार्ज और गोलाबारी की। घरों में घुसकर गिरफ्तारियाँ हुई और अपने इस कृत्य को न्यायसंगत बनाने के लिए आन्दोलन में नस्लवादी घुसपैठ की कहानी गढ़ी। प्रशासकीय निष्क्रियता के फलस्वरूप यह आन्दोलन पूरे विदर्भ में फैल गया। तब भाजपा के विधायक मधुकर कुकड़े की सलाह पर 'ओ.बी.सी. बचाओ समिति' (चूँकि अपराधी पिछड़े वर्ग से था) के बैनर तले आन्दोलन शुरू हुआ।3 यशदा की रिपोर्ट में इसी व्यक्ति पर खैरलांजी की घटना पर पर्दा डालने का आरोप लगाया गया था। इस पूरे मसले पर भंडारा जिले के तत्कालीन पुलिस अधीक्षक का यह कहना कि ''ऐसा तो होता रहता है।'' सामन्तवादी मूल्यों का समर्थन करता है।

मुजफ्फरपुर घटना पर पत्रकार नेहा दीक्षित की रिपोर्ट 'Shadow lines' का जिक्र समीचीन है। रिपोर्ट के अनुसार घटना के पीछे तत्कालीन स्थानीय विधायक सुरेश राना, हुकुम सिंह, संगीत सोम की मुख्य भूमिका थी। मुस्लिम युवक द्वारा हिन्दू लड़की को भगा ले जाने से यूँ ही इलाका संवेदनशील बना हुआ था। उस स्थिति में इन नेताओं ने इलाके में 'बेटी बचाओ, बहू बनाओ' अभियान चलाया। घटना (जुमे) के दिन, एक अफवाह को सच मानकर मुस्लिम समुदाय को नीचा दिखाने के लिए तकरीबन 100 मुस्लिम महिलाओं से बलात्कार किया गया।

इस क्रम में भारतीय बलात्कार कानून का साक्ष्य कानून का अनुच्छेद 155 के खण्ड '4' के जिक्र के बिना बात अधूरी रहेगी। यह कानून 1872 से आज तक विद्यमान है। इस कानून में बलात्कार केस में 'यौन पवित्रता' के अभाव को महत्व दिया जाता है, न कि स्त्री की इच्छा के अभाव को। इसके अन्तर्गत बचाव पक्ष को यह अधिकार दिया गया कि जब किसी पुरुष पर बलात्कार का मुकदमा चले तो सम्भावित बचाव के लिए भुक्तभोगी को दुश्चरित्र दिखाया जा सकता है और ऐसा साबित होते ही यह निष्कर्ष निकलता है कि वह इस कृत्य में शामिल थी जिससे आरोपित शख्स के बच निकलने का रास्ता खुल जाता है। इसी अधार पर हरियाणा की सुमन रानी और महाराष्ट्र की मथुरा को न्याय नहीं मिला। इन चयनित कुछेक उदाहरणों के बाद निःसंकोच यह स्वीकार किया जा सकता है कि बलात्कार जैसा जघन्य एवं प्रतिशोधात्मक अपराध भी राजनेताओं के संरक्षण में फलीभूत होता है।

वर्तमान दौर में बढ़ती यौन हिंसा में समाज की पूँजीवादी संरचना की भी भूमिका है। समाज के आर्थिक विकास हेतु राज्य ने नवीन उदारवादी आर्थिक नीतियों को अपनाया, जिसने सामाजिक मूल्यों को दरकिनार कर पूँजी को प्रधानता दी। इसी पूँजी के लालच में आज नारी शरीर को फैशन के नाम पर नग्न और अर्धनग्न चित्रित किया जाता है। प्रत्यक्षतः ये यौन उत्पीड़न का कारण न लगे, परन्तु एक तो वे नारी शरीर का अश्लील चित्रण कर कामेच्छा जगाते हैं; जिसकी पूर्ति हेतु पुरुष लाचार, बेबस और आसानी से उपलब्ध महिलाओं को शिकार बनाते हैं; दूसरे यह नवीन विश्व व्यवस्था महिला को भोग्या मानने वाले परम्परागत मूल्यों को ही बढ़ावा दे रही है। विकास का यह माडल अपने वजूद के लिए परम्परागत मूल्यों पर ही आश्रित दिखता है। नवउदारवादी इन नीतियों ने बाजार को इतना प्रमुख बना दिया कि सम्बन्ध और भावनायें भी वस्तु की श्रेणी में खड़ी हैं और इस बाजार पर जनता के हित से सम्बन्धित कोई सरकारी नियन्त्रण नहीं।

अन्ततः यह कहा जा सकता है कि राज्य के लचीले रूख एवं यौन उत्पीड़न आपस में सम्बन्धित हैं। वास्तव में समाज के ढाँचे की बनावट के कारण ही महिलायें ज्यादा हिंसा का शिकार होती हैं, इसलिए कानून निर्माण और उसका पालन करवाना, इन दोनों पक्षों की गम्भीरता को समझना होगा। अब समय आ गया है कि हम यह समझें कि बलात्कार महज एक वैयक्तिक मसला नहीं, वरन् कई बार इसके निहितार्थ राजनैतिक भी होते हैं।

सन्दर्भ सूची

1. जोशी, गोपा (2006) 'सम्प्रदायिकता और नारी: गुजरात 2002', 'भारत में स्त्री असमानता: एक विमर्श', हिन्दी माध्यम कार्यान्वयन निदेशालय, दिल्ली विश्वविद्यालय, पृ. 222।

2. बुटालिया, उर्वशी, (2001) 'भारत में महिलायें एवं हिंसा', 'नारी राजनीति: संघर्ष एवं मुद्दे', हिन्दी माध्यम कार्यान्वयन निदेशालय, नई दिल्ली, पृ. 380-381।

3. तेलतुमड़े, आनन्द- 'खैरलांजी के बाद सत्ता का दमन चक्र' 'सत्ता, समाज और दलित' ग्रन्थ शिल्पी (इण्डिया) प्राइवेट लिमिटेड, पृ. 80।

4. धुसिया, सुभी- ''सामन्ती समाज का दर्पण: बलात्कार कानून''- ''उत्तरा'' महिला पत्रिका, पृ. 21।